Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. 16, Issue No. 6, May-2019, ISSN 2230-7540

अभिराज राजेन्द्र मिश्र की कथाओं में काव्य-सौन्दर्य

Chaman Lal*

Research Scholar, Department of Sanskrit, Panjab University, Chandigarh

***सार –** मनुष्य एक बुद्धिमान एवं चिन्तन करने वाला प्राणी है। भावों की अनुभूति और अभिव्यक्ति उसकी पहचान है। प्राचीन काल से अनुभूति और अभिव्यक्ति को प्रस्तुत करने के लिए विभिन्न माध्यमों का सहारा लिया है। इन माध्यमों में से भाषा सर्वोत्कृष्ट साधन है। भाषा वह माध्यम है, जिसमें हम चिन्तन करते हैं तथा अपने विचारों को अभिव्यक्त करते हैं।*

---------------------------------x---------------------------------

सोफिस्ट में प्लेटो ने वर्णन किया है-

विचार आत्मा की अध्वन्यात्मक बातचीत है, पर वही जब ध्वन्यात्मक होती है तो भाषा बन जाती है।

इन्साइक्लोपीडिया में भाषा अर्थात् Language को परिभाषित करते हुए कहा - A system where sounds or signs convey objects actions and ideas.

भाषा में ध्वनियों भावों को प्रदर्शित करती हैं। 'शब्दार्थौ सहितौकाव्यम्' भाषा की दुनिया विचित्र है। शब्दों का आपार भण्डार है। शब्दों का यह असीमित संसार साहित्य संसार की क्षमता को धारण करता है।

एक साहित्यकार के पास अपनी संवेदनाओं को व्यक्त करने का साधन शब्द भण्डार है। भाव साहित्य की आत्मा है, तो भाषा उसका बाह्य आवरण है।

अभिराजराजेन्द्रमिश्र भाषा की विशेषताओं से अवगत हैं। उनके भाषा प्रयोग में वर्ण-विन्यास, पदरचना, वाक्य संरचना, सर्वथा औचित्यपूर्ण है। कथाओं में अलंकार का अनावश्यक बोझ नहीं है। न ही अलंकारों की शोभा से शून्य है। विषय व प्रसंगानुसार भाषा में अलंकारिक एवं शोभा को बढ़ाते हैं। उनके समासबहुल व आलंकारिक दीर्घ वाक्य हृदय को आह्लादित करते हैं। महानगरी कथा में रेलान में स्वाभाविक सचित्र भावों का वर्णन किया गया है। मिश्र जी की कल्पना, उपमाएँ, वर्ण विन्यास, अलंकार, व्याकरणिक योग्यता प्रदर्शित होती है-

''निर्मुदिरा मुदी नवम्बरमासस्य भग्नभाण्डात्परितो व्याकीर्णा क्षीरधारेव सर्वत्र वितताऽसीत्। तास्मित्रि व्याजिधवलिम्नि स्थिताः क्वधिदाभुग्नशिरसो विन्ध्यगिरिपादाः क्वचित्सजलजलधर कपिशा नीर-ध्रवनराजयः, क्वचिच्छान्तनीवृतिसेवित पर्णशालो जठरतापस इव विलम्बिकूर्च पुरोहोऽद्वितीयो न्यग्रोधः, क्वचिच्छस्यश्यामला मालभूमिः, क्वचिदितस्ततो धावन्तोग्रामसिंह'..... रेखांकित चित्रजातमिव समलक्ष्यत।

यह वर्णन रेलगाड़ी की खिड़की से स्वाभाविक दिखाई दे रहा है। उस दृश्य में सन्धिसमन्वय, अलंकार, वर्ण सौन्दर्य की कल्पनाशील छटा देखते ही बनती है। कविवर का भाषा पर आधिपत्य है। उनके शब्द संकेतों पर नृत्य करती है। अलंकार उनके संवेगों के पूरक हैं। शास्त्र उनके हृदय की भावना को लक्षित करते हैं। वर्णन से मुख्य पाठक मनोरंजित हो जाता है। वर्णनानुसार दीर्घकथाओं का चित्रण उनकी विद्वक्ता का प्रमाण है।

वे व्यवहारिकता का उपदेश करते हैं तथा सामाजिक सरोकारों से व्याख्यान करते हैं- छात्रोद्दतिं भाललेखं मृषा कर्तुं को नु शक्तः? सर्वगुण सम्प्रन्नोऽपि नैषधो जलः किं विपदग्रस्तो नाऽभूतः? मर्यादा पुरुषोत्तमोऽपि दाशरथिः किं कान्तारवास व्यथां प्रियापहरणजन्यावमानं न सोढमान्? अयुत संख्यासिंधु-रबलोऽपि मध्यमपाण्डवं: किं मत्स्य महान से भोजनं न पपाच?

उपमाओं का सौन्दर्य:

श्रृंगारिक वर्णन में कवि की कलम मुखरित होती है। 'चञ्चा' में कामवीथिकाओं का वर्णन करते हुए उपमानों की छटा-प्रदर्शित होती है।

www.ignited.in

''यथा विशाल कान्तारेनदी, तारापथे नीहारिका, पर्वत शिखरे हिमानी, भवने वलभी, नयन युगले वा कनीनिका परमां विच्छित्तिमावहते, तथैव नगरे मकरकथ्या।

कवि की भाषा चूंकि भावों की अनुगमिनी है, इसीलिए जैसे ही रस की प्रमुखता का अवसर आता है। वैसे ही भाषा व शैली रसानुगामी एवं प्रसाद गुणमयी हो जाती है। यथा-

''अन्तर्यामिन! अत्थितान् पातयसि! पापान् प्रवर्धयसि साधून सर्वथा खली करोषि! आये निघृण परमेश्वर! अपि च दग्धमार्जवम्! गतं गौरवम्। विलुलितं वैभवम्। विनष्टो विश्वासः। कलन्कितोऽनुरागः। जितम साम्प्रकारिणा पंचशरेण।''

लोकोक्ति/मुहावरे वर्णन:

कवि की भाषा सहज एवं स्वाभाविक है, जन-जन की भाषा है। अतः जन प्रचलित भाषा की तरह उसमें स्थान-स्थान पर अनायास ही नवीन स्वनिर्मित शब्दों एवं लोकोक्तियों का वर्णन किया गया है। उनकी कथाएँ जनमानस में स्थान बना लेती हैं तथा निर्विवाद रूप से इस बात को निराधार सिद्ध करती हैं कि संस्कृत एक जड़मृत एवं व्यावहारिक भाषा है। वे समकालीन सनातन को भाषा का प्रारूप मानते हैं। हिन्दी भाषा में प्रचलित लोकोक्तियों का सहज वर्णन किया है। ''अविघमाने वेणु दण्डे वेणुरपि नाध्माष्यति।''

''रिक्तं-चणकं सान्द्रं नदति स्नाहि दुग्धेन,

फल पुत्रेण 'शृणु कर्ण इयं उद्घाट्य',

पेरम्णि युद्धे च सर्वे युक्ति युक्त आदि।''

वर्तमान साहित्य में वे प्रचलित पदावली का प्रयोग अनायास ही करते हैं। प्राचीन काल के साहित्य में 'प्रकाशस्तम्भ' का वर्णन किया है। अभिज्ञान शाकुन्तलम् में दुष्यन्त विदूषक को कहते हैं-

परिहासविजल्पितं सखे परमार्थेन न गृह्यतां वचः

यहाँ एक चक्र कथा के अनुसार भी 'परिहासविजल्पितं मेतत्'।

तथा पोतविहगौ में-

बहुलि! तदासीत् परिहासविजल्पितम्।

एकचक्र कथा में - 'केनापदेशेनाश्रमपदं गच्छेयम्' अभिज्ञान शाकुन्तलम् की तरह जिजीविषा में 'किमिति जोषमास्ते?' तथा राङ्गडा कथा में जोषमास्यते भवता' प्राप्त होता है।

शाकुन्तल के समान सुखशयितप्रच्छिका में 'कः कालस्त्वामन्वेषयामि' तथा 'स्वनियोगमशून्यं कुर्वन्ती' जैसी पदावली प्रयोग हुई है।

अभिज्ञानशाकुन्तल की पदावली ने कवि के हृदय में स्थान प्राप्त किया हुआ है। अनेकत्र उसी साम्यता वाली पदावली प्रतिबिम्बित होती है- तच्च्चक्रेऽपि पर्यायैरूच्चैर्नीचैश्च गच्छति तस्मै गतिं ददतुः। दुष्यंत शकुतलां संयोजयन्नसौ चिरस्य वाच्यं न गतः प्रजापतिः। आदि प्रयोग यह सिद्ध करते हैं कि कालिदास के वैदर्भी रीतिसमन्वित वाक्यों का प्रयोग कविवर अनायास ही करते हैं-

उत्तररामचरित में भवभूति जैसे राम की करूणा को अभिव्यक्त किया-

अनिभिन्नों गंभीरत्वादन्र्तर्गूढ़ धनव्यथा।

पुटपाक प्रतीकाशो रामस्य करणो रसः।।

कुक्की की कुरुणावस्था को अभिराज।

राजेन्द्रमिश्र कुछ इस तरह व्यक्त करते हैं- 'पुटपाक प्रतीकाशमन्तश्शोकं सत्यनमुपभूह्य' किशताजुनीयम् की नायिका द्रौपदी की पीड़ा भारवि की पदावली में तथापि वक्तुं व्यवसाययन्ति मां निरस्तनारी समयादुराधयः। के रूप में प्रकट है उसी प्रकार रांगडा की नायिका भी नारी मर्यादा का उल्लंघन कर कापालिक धर्म के पालन के लिए विवश हो जाती है - निरस्तनारी समयाकापालिकधर्म-निरतेयम्।' मास की पदावली भी मिश्र जी के साहित्य में प्रयोग की गई है।

रघुवंश में राजा दलिय द्वारा नंदिनी के अनुकरण का कवि कालिदास पर प्रभाव -

स्थितः स्थितामुच्चलितः प्रयातां,

निषेदुषीमासनबन्धधीरः

जलाभिलाषी जलमाददानां छायेव वा।

भूपतिरन्वगच्छत्।।

Chaman Lal*

कुछ इस तरह वर्णन है। कुक्की कथा में मार्जारी द्वारा नायक के अनुसरण का है-

यस्मिन् यस्मिन् कक्षे गच्छामि वत्रैव साथि गच्छति। यदि भूमावुपविशामि लम्हें विभृतं स्थिता मां प्रतीक्षते। समुत्थाय प्रचलति मयि साकि प्रचलति। ...... सा छामेव मामवगच्छत्।

अन्य भाषा के शब्दों का वर्णन

अभिराजराजेन्द्र मिश्र की कथाओं में संस्कृत भाषा पर पूर्वाग्रहों से प्रभावित लोगों पर आरोप लगाता है कि संस्कृति भाषा वर्तमान में समाप्त है अर्थात् व्यवहार में प्रयोग नहीं होती। प्राचीन काल से अखण्ड ज्ञान का स्त्रोत भी संस्कृत भाषा ही है।

मिश्र जी की कथाओं मंे प्रयोग मिलते हैं कि संस्कृत भाषा वर्तमान में भी जीवित है। साहित्यिक व्यक्ति भी सतत् सर्जनशील है। भाषायी दृष्टि से भी निरन्तर गतिशील रहते हैं। संस्कृत भाषा तार्किक एवं वैज्ञानिक पद्धति से नवीन शब्दांे की रचना हो रही है। अभिराज राजेन्द्र ने भी स्वयं नवीन शब्दों का सृजन किया है।

कुछ उदाहरण देखे जा सकते हैं-

अयष्पथगन्त्री	-	रेलगाड़ी
स्थानकम्	-	स्टेशन
नियतगमनशीला	-	प्रतिदिन जाने वाली
नियत्सेवकत्वम्	-	स्थायी नौकर
अर्धबाहुकम्	-	बनियान
वस्त्रनिमणिकर्मशाला	-	कपड़ा बनाने का कारखाना।
लम्बरा	-	लोई
कल्यवर्त सामग्री	-	कलेवे की सामग्री
आरक्षिकार्यालक	-	एस.पी. कार्यालय
कोष्ठागार	-	कोठारी
रक्षीस्थानम्	-	थाना
कूकुरुतम्	-	लुकाछिपी की क्रीड़ा
औषधपत्रम्	-	दवाइयों की सूची
निरौषधसंक्रामक रोगः	-	लाईलाज महामारी
स्तन कर्कट रोगः	-	स्तन कैंसर

ध्वन्यात्मक वर्णन:

मिश्र जी के काव्य में उपर्युक्त वर्णन से अतिरिक्त भी शब्द भण्डार है। जो शब्द कोश को और भी उत्कृष्टता प्रदान करता है। जैसे-

खट्खडिति खट् खट् खट् खटाखट खटाखट् खटाखट्, गुँई, गुँई आदि शब्द शाब्दिक सौन्दर्य द्विगुणित कर देते हैं।

अभिराज राजेन्द्र मिश्र की भाषा मनोरंजनात्मक है। वे अचितमात्रा में, आवश्यकतानुसार, सघन पदबन्धता समासिकता, आलंकारिकता, पदलाघव, रसानुप्रवणता आदि को एक धागे में पिरोती है। इन सभी बिन्दुओं का प्रयोग कथा को कमजोर नहीं करता बल्कि उत्कृष्टता को और भी बढ़ा देता है।

सुभाषित वचनों का वर्णन:

अनेक स्थानों पर कथाओं में भावागाम्भीर्य को उत्कृष्टता प्रदान करने के लिए समास, अलंकार, लोकोक्तियों, वर्ण-सौन्दर्य को सहजता से प्रकट किया गया है और सुभाषितों ने उनकी भाषा में चार चाँद लगा दिए। आरवि के लिए कहे गए वचन ''नारि के लसत्नाभिः वचोवद्धारवेः के उपमान को स्मृति करवाती है उनकी ये कृति-

संसारेऽस्मिन् वैविध्यमेव व्यवस्थामूलं सर्वजनशरणञ्च।

वन्ध्यादोषोऽपिनाम स्त्रीणां नयननिद्राहरः।

अश्रीकं नन्दनं बिना भवनम्।

संसारं परित्यज्य संसारस्य रक्षा?

सर्वाणिदिनानि समञ्जसान्येवनातियान्ति।

अनिश्चतेयं जीवनयात्रा।

उपर्युक्य उदाहरण उनकी लेखनी को भावगाम्भीर्य एवं सुन्दर प्रदान करते हैं।

निष्कर्ष:

अभिराजराजेन्द्रमिश्र आधुनिक संस्कृत साहित्य के सागर में अनमोल मोती हैं। उनका शब्द भण्डार एवं अर्थप्राकट्य अवर्णीय है। वे शब्द सम्राट हैं। उनकी भाषा की अपनी मौलिक एवं विलक्षण विशिष्टताएँ हैं जो उन्हें साहित्यजगत में अनुपम स्थान है। काव्य एवं कवि प्रतिभा के समन्वय पर, पाण्डित्य प्रदर्शन पर, संवेदना एवं भाषा के सम्बन्ध पर उनके अपने विचार उन्होंने 'अनाख्याता बाणभट्टात्मकथा' में स्पष्ट एवं मुखर रूप मंे प्रस्तुत किए हैं-

कवि प्रतिभा समवाप्य कोमलकान्त पदावलीं ललितोदात्त संवेदनाञ्च सहृदयहारिकाव्यविगृहमाधत्ते। शास्त्रार्थ प्रभृति पाण्डित्य प्रदर्शन सन्दर्भे सैव प्रतिभा वितण्डाछल जाति निग्रहस्थान द्युपुपस्कृता वेगवती प्रतीयते। किञ्च दरारोहक्लिष्टशास्त्रमन्थन व्यापृता सैव प्रतिभा रूक्षाऽतिरूक्षा कठिनाऽतिकठिना जायते।

इस प्रकार अभिराजराजेन्द्रमिश्र की भाषायी विशेषता एवं रीति योजना सर्वथा उत्कृष्टता की कसौटी पर खरा उतरती है। काव्य प्रतिभा के सहज संस्कार से अनुप्रामाणि कवि राजराजेन्द्र मिश्र रस, अलंकार, रीति-योजना एवं भाषा की विशेषता की समीक्षा के निष्कर्ष को शत-शत काव्यकञ्चन को धारण करता है।

संदर्भ सूची

1. बलदेव उपाध्याय, संस्कृति साहित्य का इतिहास।
2. भोलानाथ तिवारी, भाषा-विज्ञान।
3. इल्यूस्ट्रेटेड फेमिली इनसाइक्लोपीडिया, पृ. 502
4. भामहः काव्यालंकार
5. अभिराजराजेन्द्र मिश्रः इक्षुगन्धा, वैजयन्त प्रकाशन, इलाहाबाद, 1986
6. वही, चित्रपर्णी, वैजयन्त प्रकाशन, इलाहाबाद, 2001
7. वही, छिन्नमस्ता, वैजयन्त प्रकाशन, इलाहाबाद, 2010
8. वही, पुनर्नवा, वैजयन्त प्रकाशन, इलाहाबाद, 2008
9. वही, रांगडा, वैजयन्त प्रकाशन, इलाहाबाद, 1992

Corresponding Author

Chaman Lal*

Research Scholar, Department of Sanskrit, Panjab University, Chandigarh